

व्यंग्य का सामाजिक एवं राजनीतिक महत्व**चन्द्रप्रभा तिवारी****शोध सार**

शोध छात्रा,विषय – हिंदी, जीवाजी
 विश्वविद्यालय,ग्वालियर (म.प्र.)

समाज के बिना साहित्य की परिकल्पना संभव नहीं है। लेकिन समाज बड़ा ऊबड़-खाबड़ और विषम होता है। साहित्य समाज के इस ऊबड़-खाबड़ स्वरूप को सामने लाता है। समाज में इतनी विषमता व्याप्त होती है कि उसके बारे में केवल अच्छा-अच्छा कहने से काम नहीं चलता। साहित्य समाज के भद्रे चेहरे का वर्णन करके सामने लाता है। समाज में व्याप्त अत्याचार, हिंसा, विषमता आदि को सामने लाकर समाज को जागरूक बनाने का सबसे सशक्त साधन व्यंग्य है। जब- जब समाज की स्थिति विसंगत होती है, तब-तब उसकी ओर लोगों का ध्यान ले जाने के लिए व्यंग्य की आवश्यकता होती है। इस प्रकार व्यंग्य समाज में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है और उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका के मूल में होता है यथास्थिति का बदलाव; समाज में बदलाव लाना।

Paper Received date

05/07/2025

Paper date Publishing Date

10/07/2025

DOI<https://doi.org/10.5281/zenodo.16329675>

साहित्य की प्रत्येक विधा का मूल उद्देश्य परिवर्तन की क्रांतिकारी चेतना का संचार करना और समाज को सीधे रास्ते पर लाना है। अतः कहानी हो या कविता, नाटक हो या कोई भी व्यंग्य के तत्त्व से अछूता नहीं रह पाता है।

IMPACT FACTOR**5.924****मुख्य विन्दु : परिकल्पना, समाज, विषमता, क्रांतिकारी, व्यंग्य**

आज तो चलचित्रों में भी उपन्यास समाज की विसंगतियों एवं विषमताओं माध्यम से को प्रस्तुत करने के लिए व्यंग्य का सहारा लिया जाता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि व्यंग्य समकालीन समाज की माँग है। व्यंग्य के हँसते-हँसते बहुत कुछ कह दिया जाता है; और लोग हँसते हुए कही हुई बात का बुरा न मानकर उस पर गंभीरता से विचार भी करने लगते।



International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

व्यंग्य शब्द अंग्रेजी सटायर के अर्थ में हिन्दी में चलता है। पाश्चात्य साहित्य में रोम में 65 ई. पू. सटायर शब्द का प्रयोग लगातार नाटक के लिए होता था। वहीं लैटिन में सैतुरा विकसित हुआ, जिसका अर्थ गड़बड़झाला होता है। अर्थात् सैतुरा शब्द परनिंदा के अर्थ में प्रयुक्त होता था। वही बाद में अंग्रेजी में सटायर बन गया। अंग्रेजी सटायर के लिए हिन्दी में व्यंग्य, व्यंग, उपहास, विकृति, विरूप, व्यंजना शक्ति द्वारा ध्वनित व्यंग्यार्थ आदि होता है।

संस्कृत के 'शब्दकल्पद्रुम' व्यंग्य को समझाते हुए कहा गया है अंगानि यस्मात्। अतः उपर्युक्त बातों से साफ हो जाता है कि सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्रों में व्याप्त विषमता एवं विकलांगता जब बढ़ती है, तब व्यंग्य समाज का रक्षक बनकर कार्य करता है। इस प्रकार व्यंग्य और व्यंग्यकार का काम समाज के विकृत एवं गलित अंगों के प्रति समाज को सचेत करना है। पं. कालिकाप्रसाद ने बृहद् हिन्दी कोश में व्यंग और व्यंग्य की व्याख्या अलग-अलग अर्थों में की है। उन्होंने व्यंग शब्द का अर्थ शरीरहीन, विकलांग एवं अव्यवस्थित दिया है; और व्यंग्य को समझाते हुए वे लिखते हैं कि व्यंजना वृत्ति द्वारा बोधित, संकेतित अर्थ यानी संकेतार्थ, गूढार्थ तथा चिढ़ाने, नीचा दिखाने आदि के उद्देश्य से कहे गए विपरीतार्थबोधक ताना शब्द कहा गया है।

माना कि व्यंग और व्यंग्य शब्दों को लेकर हिन्दी में मतभेद रहा है; किंतु दोनों शब्दों की अर्थाभिव्यक्ति एक समान है। कहने का मतलब यह है कि व्यंग्य का व्यंजना वृत्ति द्वारा बोधित अर्थ यानी संकेतार्थ, ताना आदि के जन्म के पीछे समाज एवं मनुष्य जीवन का वह परिवेश है, जो विकृति, बौनापन, विद्रूपता एवं विषमता से भरा हुआ है। परिणामस्वरूप व्यंग्यकार अपने व्यंग्य के माध्यम से समाज के विकृत एवं गलित अंगों के प्रति हमारा ध्यान खींचता है। Encyclopaedia Ammerica में लिखा है 'A literary work in prose or verse, often humorous] in which wickedness or folly consured and made ridiculous.' 'सटायर गद्य या पद्य के रूप में वह साहित्यिक कृति है, जिसमें दुष्टता और मूर्खता की आलोचना करते हुए उसे उपहासास्पद बना दिया जाता है। Encyclopaedia Britanica: Satire in its literary aspect] may be difined as the eÜpression] in adequate terms, of the sense of amusement or disgust eÜited by ridiculous or unseemly, provided that humour is distinctly recognizable element] and the utterance is invested with literary form- Wthout humour it is invictive]without literary form it is more clowrish jeering.' 'व्यंग्य की साहित्यिक तथा ग्राह्य परिभाषा हास्यास्पद अथवा निंदक तथ्यों की मनोरंजक अथवा

घृणोत्पादक अभिव्यक्ति के रूप में दी जा सकती है। बशर्ते कि हास्य तत्त्व साहित्यिक रूप में स्पष्टतः परलिखित हो। हास्य के अभाव में व्यंग्य केवल लांछन तथा साहित्यिकता के अभाव में विदूषकी परिहास मात्र है। (1)

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि अनुचित व्यवस्था तंत्र अनुचित मानव व्यक्तित्व तथा अनुचित परिस्थितियाँ व्यंग्य के जन्म का कारण हैं। केवल हास्य या केवल निंदा करना व्यंग्य का कार्य नहीं है। अतः व्यंग्य की सार्थकता हास्य के सहयोग से निंदा करके समाज को सचेत करने में है। पाश्चात्य साहित्य जगत के अनेक समीक्षकों एवं रचनाकारों ने व्यंग्य पर अपने विचार व्यक्त किए हैं, जो इस प्रकार हैं।

—जॉन एम. बुलिट ने व्यंग्य के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है

मानव अथवा उसके आचारों की मूर्खताओं अथवा सदोषता पर किया गया साहित्यिक प्रहार, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, सामान्य हो या विशिष्ट, सत्य हो या असत्य, क्रूर हो या हास्यास्पद, गद्य हो या पद्यमय सब व्यंग्य शब्द के अंतर्गत है। (2)

सटायर कटु आलोचना का साधन है। उससे कड़वी सच्चाई बयान होती है। वे सटायर को कटु आलोचना और हास्य से युक्त मानते हैं। इसीलिए वे कहते हैं कि 'हास्यास्पद का इतना अधिक मजाक उड़ाया जाता है कि उसमें दया एवं सहानुभूति समाप्त हो जाए, तब वह हास्य व्यंग्य की कोटि में आ जाता है। वे व्यंग्य का मूल धर्म उपहास मानते हैं।

स्विफ्ट के मतानुसार- 'व्यंग्य एक प्रकार का शीशा है, जिसमें देखने वाले को अपने मुख के अतिरिक्त प्रत्येक का मुख दिखाई देता है। यही कारण है कि विश्व में व्यंग्य का स्वागत किया जाता है। कम लोग इससे अपने को पीड़ित अनुभव करते हैं। (3)

इस तरह स्विफ्ट ने व्यंग्य की सामाजिक सार्वजनिक व्यापकता पर जोर दिया है।

प्रो. राधेश्याम शर्मा इस बात का समर्थन करते हुए कहते हैं, इसमें जरूरी नहीं कि व्यंग्य में हँसी आएगी। यदि व्यंग्य चेतना को छेड़ देता है, दुख को सामने ला खड़ा करता है, सोचने को बाध्य करता है, व्यवस्था की सड़ांध पर सोचने को बाध्य करता है और परिवर्तन की ओर प्रेरित करता



International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

है, तो व्यंग्य अपने में सफल है। जितना व्यापक परिवेश होगा, जितना तिलमिला देने वाली विसंगति होगी, व्यंग्य उतना ही सार्थक होगा। पाश्चात्य रचनाकारों एवं आलोचकों के व्यंग्य संबंधी विचारों के आधार पर निम्नलिखित बातें स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आती हैं

- व्यंग्य का जन्म अव्यवस्था और विकृतियों से होता है।
- व्यंग्य का उद्देश्य जीवन की विषमताओं की आलोचना करना तथा विसंगतियों, मिथ्याचारों और विकृतियों के प्रति समाज को सचेत करना है।
- व्यंग्य का कार्य जीवन की समस्त विकृतियों एवं निंदनीय तथा नकारात्मक व्यवस्था का साहित्यिक ढंग से कलात्मक विरोध करना और उसे नग्न करना तथा उसे नष्ट करके समाज के नवनिर्माण की प्रेरणा देना है।

अतः हम कह सकते हैं कि पुरानी, सड़ी-गली तथा विकृतियों से ग्रस्त व्यवस्था से बचने के लिए मनुष्य की स्वयं की शक्ति ही उसे संतोषजनक जगत की खोज करने की प्रेरणा देती है। व्यंग्य यहाँ साधन बनकर आता है। साहित्य के माध्यम से व्यंग्य एक स्वस्थ जगत का निर्माण करने का प्रयत्न करता है।

मैथ्यू हागर्थ के अनुसार -

व्यंग्य चेतावनी देता है कि मनुष्य वह खतरनाक जानवर है, जिसमें मूर्खतापूर्ण कार्य करने की असीम क्षमता है और यदि व्यंग्य द्वारा इस सत्य की स्पष्ट अभिव्यक्ति कर दी जाती है, तो वह पर्याप्त है। मनुष्य के गौरव का वर्णन करना कवियों का कार्य है। इस प्रकार साहित्य का एक अभिन्न अंग व्यंग्य बन जाता है।

- भारतीय समीक्षकों और रचनाकारों की दृष्टि में व्यंग्य

हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार - व्यंग्य वह है, जहाँ कहने वाला अधरोष्ठों में हँस रहा हो, और सुनने वाला तिलमिला उठा हो।

इंद्रनाथ के अनुसार परिवेश के लिए असंतोष व्यंग्य का रूप धारण करता है। - इसे खरी-खरी सुनाना भी कहा गया है।

डॉ. शेरजंग गर्ग मानते हैं – 'व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति या रचना है, जिसमें व्यक्ति तथा समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं तथा कथनी और करनी के अंतरों की समीक्षा अथवा निंदा भाषा को टेढ़ी भंगिमा देकर अथवा कभी-कभी पूर्णतः सपाट शब्दों में प्रहार करते हुए की जाती है। वह पूर्णतः अगंभीर होते हुए भी गंभीर हो सकती है, निर्दय लगते हुए दयालु हो सकती है, प्रहारात्मक होते हुए तटस्थ हो सकती है, अतिशयोक्ति एवं अतिरंजना का आभास देने के बावजूद पूर्णतः सत्य हो सकती है। (4)

हरिशंकर परसाई के मतानुसार व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है, जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश करता है।

कन्हैयालाल नंदन मानते हैं व्यंग्य आक्रोश का उबलता हुआ तूफान नहीं है, पीड़ा और आक्रोश का संयमपूर्ण सृजन है – हाँ, संयमपूर्ण सृजन ! जहाँ आदमी आक्रोश से पागल नहीं हो जाता, वह अपने आक्रोश को पिघले हुए ताँबे के रूप में तपाकर रचनात्मक साँचे में ढालता है, ताकि विकृति चौराहे पर नंगी खड़ी की जा सके।

कन्हैयालाल नंदन मानते हैं व्यंग्य आक्रोश का उबलता हुआ तूफान नहीं है, पीड़ा और आक्रोश का संयमपूर्ण सृजन है – हाँ, संयमपूर्ण सृजन ! जहाँ आदमी आक्रोश से पागल नहीं हो जाता, वह अपने आक्रोश को पिघले हुए ताँबे के रूप में तपाकर रचनात्मक साँचे में ढालता है, ताकि विकृति चौराहे पर नंगी खड़ी की जा सके।

बालेन्दुशेखर तिवारी का मानना है व्यंग्य एक विशिष्ट समाजधर्मी प्रेक्षण – विधि अथवा एक विशिष्ट मानसिक भंगिमा है, जिसका उद्भव अंतविरोधों के कारण होता है और जिसमें व्यक्ति अथवा व्यवस्था के दौर्बल्य की आक्षेपात्मक अभिव्यक्ति द्वारा परिवर्तन का अभीष्ट पूर्ण होता है। " (5)

शरद जोशी के मतानुसार – व्यंग्य सेन्स ऑफ ह्यूमर है, जो अन्याय अत्याचार और निराशा के विरुद्ध होने से व्यंग्य में अभिव्यक्त होता है।

बेठब बनारसी मानते हैं जब किसी व्यक्ति या समाज की बुराइयों या न्यूनता –को सीधे शब्दों में न कहकर उल्टे या टेढ़े शब्दों में व्यक्त किया जाता है, तब व्यंग्य की सृष्टि होती है। व्यंग्य एक प्रकार की आलोचना है; किंतु जब व्यंग्य में क्रोध आ जाता है, तो हास्य की मात्रा कम हो जाती है

- हिंदी साहित्य में व्यंग्य का उद्भव और विकास

व्यंग्य युगीन विसंगतियों की वैविध्यपूर्ण तीखी अभिव्यक्ति है। युग की विसंगतियाँ हमारे चारों ओर के यथार्थ जगत से, वैदग्ध्य इन विसंगतियों को वहन करने वाले शैली सौष्ठव से तथा तीखेपन, विसंगत एवं वैदग्ध्य की चेतना पर पड़ने वाले मिले-जुले प्रभाव से संबंधित है।

इस प्रकार भारतीय तथा पाश्चत्य विद्वानों के व्यंग्य संबंधी विचारों तथा परिभाषाओं का गहन अध्ययन करने से एक बात स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आती है कि व्यंग्य की परिभाषा पर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। व्यंग्य की जो भी परिभाषाएँ देखने को मिलती हैं, वे सब व्यंग्य के बहुरूपी स्वरूप से प्रभावित हैं। इसीलिए व्यंग्य के बारे में कुछ विद्वानों का मानना है कि व्यंग्य हास्य का विशेष भेद है। साथ ही उन्होंने व्यंग्य में हास्य को अनिवार्य तत्त्व के रूप में भी स्वीकार किया है। उन विद्वानों में काका हाथरसी, आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, बेढब बनारसी और जार्ज मेरेडिथ का नाम उल्लेखनीय है। बर्नार्ड शॉ भी इसी श्रेणी के विद्वान हैं। उन्होंने सहानुभूतिहीन हास्य को व्यंग्य के रूप में स्वीकार किया है। (6)

दूसरी ओर डॉ. शेरजंग गर्ग, श्री बालेन्दुशेखर तिवारी, श्री शंकर पुणतांबेकर, श्री हरिशंकर परसाई, श्री कन्हैयालाल नंदन, श्री इंद्रनाथ मदान जैसे विद्वानों ने व्यंग्य के अंतर्गत हास्य को कोई विशेष महत्त्व नहीं दिया है। उन्होंने व्यंग्य को क्रांति का अस्त्र माना है। व्यंग्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति का साधन नहीं है। बल्कि उसका उद्देश्य समाज और व्यक्ति की आलोचना करके उनकी निंदा करके उनमें सुधार लाना, उनके व्यवहार में परिवर्तन लाना है।

व्यंग्य सामज के पाखंड, भ्रष्टाचार, असमानता, शोषण, अन्याय, विकृति तथा जन-विरोधी तथ्यों की गोद में पलता है; और यही उसके प्रेरणा-स्रोत हैं। व्यंग्य समाज की विसंगतियों और विकृतियों से उत्पन्न परिस्थिति की आलोचना करके उसके आदर्श पक्ष की स्थापना करता है। अथात् बहुजन हिताय एवं बहुजन सुखाय के आदर्श को स्थापित करना ही उसका उद्देश्य है। साहित्य रचना के रूप में शिष्टता और शालीनता व्यंग्य के आवश्यक गुण हैं। व्यंग्य में

वाग्जाल एवं मनोरंजन नहीं होता; बल्कि वह तिलमिलाहटों तथा कसक से भरपूर होता है। इस तरह व्यंग्य में हास्य अनिवार्य तत्त्व नहीं है।



International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

इस प्रकार व्यंग्य का लक्ष्य मानवीय दुर्बलताओं पर कटाक्ष करके उन्हें उभारना और सुधारना होता है। जहाँ कहीं विषमता, विसंवादिता और विकृतियाँ नजर आती हैं, वहाँ पर व्यंग्यकार आहत हो उठता है और कलम लेकर उनसे लड़ने निकल पड़ता है। आज साहित्य में या अन्य क्षेत्रों में भी व्यंग्य केंद्र स्थान में है। आज के सृजन के लिए वह एक अनिवार्य शर्त बन गया है; क्योंकि आज समाज में व्यंग्य अंतर्दामी देवता की भाँति सर्वत्र विद्यमान है। यही वजह है कि व्यंग्य ने दैनिक पत्रों से लेकर रेडियो तक तथा थिएटर से लेकर टी.वी. तक सभी जगह अपना डेरा डाले हुए है। हर विधा में कहीं न कहीं, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में व्यंग्य विद्यमान रहता है।

संदर्भ सूची

1. प्रसाद कमला 'आँखन देखी' : वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण, 1981 पृ.86
2. जैन कांतिकुमार, 'प्रथम तुम्हारा परसाई' : वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1988 पृ. 108
3. परसाई हरिशंकर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व: डॉ. मनोहर देवलिया, साहित्यवाणी, इलाहाबाद, 1986 पृ. 84
4. देवलिया मनोहर : हरिशंकर परसाई की दुनिया: साहित्यवाणी प्रकाशन,इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1985 पृ. 12
5. व्यास मदालशा : हिन्दी व्यंग्य साहित्य और हरिशंकर परसाई : विश्वविद्यालय प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 1999 पृ. 58
6. जैन संध्या : परसाई का इतिहास बोध : विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, 2003 पृ. 172